© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 04 , Issue : 07 | October - December 2017

शंकर शेष के नाटकों की मंचीय संप्रेषणीयता

अनीता, प्राथमिक शिक्षिका, राजकीय प्राथमिक पाठशाला, हरिजन बस्ती, जीन्द (हरियाणा)।

हिंदी के समकालीन प्रयोगधर्मी नाटककारों की परंपरा में शंकर शेष का विशिष्ट स्थान है। उनके अधिकांश नाटक चर्चित रहे हैं। आधुनिक बोध के साथ-साथ उनके नाटकों में रंगमंचीय व्यवस्था भी है। मंच-व्यवस्था को निकट से जानने के कारण शंकर शेष के नाटक पूरी तरह अभिनेय और आधुनिक रंगमंच के अनुरूप हैं।

भारत में नाटक तथा रंगमंच का अस्तित्व प्राचीन काल से ही है। भरतमुनि ने तो नाट्य कला से संबंधित 'नाट्य-शास्त्र' नामक ग्रंथ की रचना भी की है। संस्कृत की समृद्ध नाटक परंपरा तथा प्राचीन रंगशालाओं के भग्नावशेष इस बात का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। मध्यकालीन भारत में रंगमंच तथा नाटक की यह धारा क्षीण अवश्य हो गई थी परंतु तब भी यह लोक-नाट्य के रूप में अविरल प्रवाहित होती रही। अंग्रेजों के शासनकाल के समय रंगमंच ने व्यावसायिक रूपांतरण कर लिया था। देश की आजादी के बाद रंगमंच का पुनरुद्धार हुआ, विशेषकर हिंदी रंगमंच में तो मानो प्राणों का संचार हो गया हो। अब हिंदी रंगमंच ने अपनी गति पकड़ ली और सफलता के नए आयाम स्थापित किए। हिन्दी नाट्य लेखन में मोहन राकेश , लक्ष्मीनारायणलाल, जगदीशचंद्र के साथ-साथ शंकर शेष तथा उनके नाटकों का भी रंगमंच के क्षेत्र में विशेष योगदान है।

वर्तमान समय में रंगमंच की संप्रेषण शक्ति का बहुत विस्तार हुआ है। अब रंगमंच के अधिक सफल एवं प्रभावी संप्रेषण के लिए अनेक प्रकार के वैज्ञानिक उपकरणों का प्रयोग किया जाता है, जिसके कारण रंगमंच एवं प्रेक्षक परस्पर निकट आए हैं। वैज्ञानिक उपकरणों के साथ-साथ मंच-सज्जा, दृश्य-योजना, नाटककार के रंग-निर्देश, नाटक की भाषा, संगीत, नेपथ्य-कर्म आदि मंचीय संप्रेषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। शंकर शेष की मंचीय संप्रेषणीयता के विषय में नारायण राव जाधव का कथन है कि- "शंकर शेष ने अभिनेयता की दृष्टि से ही अपने नाटकों का सृजन किया है। उनके सभी नाटक अभिनेयता की दृष्टि से अभूतपूर्व सफलता प्राप्त कर चुके हैं। सफल अभिनेय नाटक के लिए जिन गुणों की आवश्यकता होती है, वे सभी गुण उनके नाटकों में विद्यमान हैं।"1 शंकर शेष के अधिकांश नाटकों की रंग-संप्रेषणीयता स्पष्ट है। ध्वनि- प्रभाव' प्रकाश योजना, पात्रों के कार्य व्यापार, मंच-सज्जा, संगीत-व्यवस्था, खामोशी, रंग-संकेत आदि का सहारा लेकर इनके नाटकों की संप्रेषण शक्ति निर्मित होती है तथापि इनके अधिकांश नाटकों का संप्रेषण शब्दों द्वारा ही संपन्न हुआ है।

हिन्दी में प्रारम्भ में रंगमंच का अभाव रहा है किन्तु समकालीन नाटककारों ने मंच की आवश्यकता का अनुभव किया। नाटककारों की रंगमंच-सापेक्ष दृष्टि से रंगमंच को प्रतिष्ठा मिलने लगी। इस कार्य में शंकर शेष जैसे नाटककारों की महत्वपूर्ण भूमिका रही। उन्होंने अपने नाटकों में रंगमंचीय दृष्टि से अनेक प्रयोग किए।

महाभारत के सन्दर्भों को आधुनिक सन्दर्भों से जोड़ने का अनूठा प्रयास नाटककर ने 'एक और द्रोणाचार्य' के माध्यम से किया है। डॉ० सुरेश गौतम एवं वीणा गौतम कहते हैं कि "यह नाटक वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार, पक्षपात, असंगति-विसंगति के मध्य झूलते जीवन-आदर्श, शिक्षक समुदाय के पंगु, असहाय, बेबस और अपाहिज चरित्र को पौराणिक कथा के माध्यम से आंकलित करता है।"2 व्यवस्था पर आश्रित और सत्ता के दबाव के समक्ष विवश आज का अध्यापक-रूपी द्रोणाचार्य किस सीमा तक संवेदनाशून्य और पक्षपाती हो सकता है, 'एक और द्रोणाचार्य' इसका जीवंत चित्रण करता है। नाटक में इस आधुनिक द्रोणाचार्य को नाटककार 'अरविंद' के पात्र के रूप में प्रस्तुत करता है। यह नाटक महाभारत के एक पूरे सन्दर्भ को आधुनिक जीवन से जोड़ने की कोशिश है, इसलिए यहाँ दो कथाएँ समानांतर चलती हैं। दो दृश्य हमारे सामने खड़े होते हैं –एक, द्रोणाचार्य के जीवन का दृश्य और दूसरा अरविंद के जीवन का। एक, पौराणिक दृश्य और दूसरा आधुनिक। दोनों दृश्यों में घटनाओं की समानता है। घटनाओं की समानता के कारण ही दोनों ही दृश्य बिम्ब-प्रतिबिंब भाव से सम्पूर्ण नाटक में एक-दूसरे को रूपायित और व्याख्यायित करते चलते हैं। नाटक के शुरू से अंत तक नाटककर ने दृश्यत्व को दोहरे आयामों में व्यक्त किया है। "राजपथ से जनपथ नटशिल्पी शंकर शेष" में डॉ० सुरेश गौतम एवं वीणा गौतम पुनः कहते हैं कि "नाटककार यहाँ आधिकारिक अथवा प्रासंगिक कथा के चक्कर में न पड़कर अपनी उद्देश्यपूर्ति के निमित्त दोनों कथाओं को समानांतर विकसित

करता है। वे स्वतंत्र होते हुए भी एक-दूसरे से गुंथी हैं। एक ओर अरविंद, उसके परिवार और कॉलेज के प्रसंग हैं और दूसरी ओर, द्रोणाचार्य, उनके परिवार और उनसे सम्बद्ध महाभारत-कालीन प्रसंग हैं।"3 अभिनेयता की दृष्टि से भी यह नाटक अनेक संभावनाएँ समेटे है। दार्शनिकता अथवा कवित्व की बोझिलता न होने के कारण नाटक में प्रयुक्त विचार सरलता और सहजता के साथ दर्शकों तक संप्रेषित होते हैं। नाटक में कहीं भी अनावश्यक दृश्य-योजना नहीं है। सम्पूर्ण नाटक को दो भागों में विभाजित किया गया है- एक पूर्वार्द्ध और दूसरा उत्तरार्द्ध। प्राचीन तथा आधुनिक, दोनों कथाएँ नाटक के दोनों भागों में समानांतर एक गति से नाटक के आरंभ से लेकर अंत तक चलती रहती हैं। दोनों कथाएँ परस्पर सम्बद्ध और एक-दूसरे की पूरक हैं। इस नाटक की संप्रेषणीयता अनुपम है। रंगमंच युद्ध की पृष्ठभूमि से संबंधित होने के कारण मंच पर अनेक प्रकार की सामग्री को जुटाना पड़ता है- रथ का टूटा पहिया, रथ का डंडा, धनुष, बाण आदि। इसी प्रकार युद्ध के मैदान की आवाजें, युद्ध का भयानक कोलाहल, गगनभेदी चीत्कारें, कानों के पर्दे फाड़ देने वाली मर्मभेदी आवाजें, जोर की शंख ध्वनि, करुण संगीत आदि ने मंचीय संप्रेषणीयता को बढ़ाया है।

कृपी:- मैं कहाँ कहती हूँ कि अपमान का घूँट पियो। द्रुपद से बदला जरूर लो। पर उतावली में नहीं, योजना बनाओ। उसका नाश उसकी जाति के लोगों से ही कराओ।

(बाहर कोलाहल। रथ के रुकने की आवाज। घोड़ों की हिनहिनाहट।)4

इस नाटक में प्रकाश और ध्वनि को विशेष महत्व दिया गया है। ध्वनि और प्रकाश के माध्यम से युद्ध की विभिन्न घटनाओं और प्रसंगों को प्रस्तुत किया गया है। विविध प्रकार के प्रसंगों में विविध प्रकार की संगीत-योजना नाटक को गति देती है और प्रभाव बनाए रखती है। इस संबंध में जयदेव तनेजा का कहना है कि "यथार्थवादी दृश्य-बंध की जकड़ से स्वयं को मुक्त करके नाटककार ने कल्पनापूर्ण प्रकाश-संयोजन, संगीत तथा न्यूनतम मंच-उपकरणों के उपयोग से अतीत और वर्तमान के लगभग साथ-साथ लगातार चलते दृश्यों को प्रस्तुत करने में सफलता प्राप्त की है।"5 स्थूल घटनाओं के साथ-साथ इस नाटक में 'अरविंद' का तीव्र मानसिक संघर्ष भी प्रकट हुआ है। 'विमलेंदु' के रूप में एक प्रेतात्मा की कल्पना भी की गई है। इन दोनों के लिए नेपथ्य में ध्वनि, प्रकाश और अंधकार की योजना की गई है जो प्रभावी है। नाटक में नाटककार ने 'नाटक के अंतर्गत नाटक' शैली का प्रयोग किया है। कुछ एक स्थलों पर बाह्य संघर्ष भी दर्शाए गए हैं लेकिन उनकी अपेक्षा अंतःसंघर्ष अधिक प्रभावपूर्ण बन सकते हैं। यह निर्देशक की प्रतिभा और कल्पना पर निर्भर है कि वह इन अंतःसंघर्षों की अभिव्यक्ति के लिए प्रकाश का उपयोग किस तरह करता है।

पौराणिक कथानक पर आधारित नाटक 'कोमल गांधार' का मूल उद्देश्य भी पुराण कथा को दोहराना नहीं वरन् उसके नए आयामों को प्रस्तुत करना ही है। शंकर शेष ने गांधारी के जीवन-संघर्ष का उद्घाटन इस नाटक में बड़े ही मार्मिक ढंग से किया है। नाटक के मध्य में गांधारी के इस संघर्ष का विस्तार दिखाई देता है। इस नाटक को दो भागों में विभाजित किया गया है – पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध। नाटक की सम्पूर्ण कथा भावों के आंदोलन पर खड़ी है। कथा की भावुकता ही इस नाटक की सबसे बड़ी शक्ति है। गिनी-चुनी घटनाओं के होने से नाटक के संवाद ही सारा काम कर देते हैं। धृतराष्ट्र और गांधारी का संघर्ष अंत तक बना रहता है। नाटककार ने इस नाटक को बड़े सशक्त ढंग से दर्शन और चिंतन के धरातल पर प्रस्तुत करने में सफलता पाई है। महाभारत-कालीन समाज व्यवस्था को चित्रित कर नाटककार ने स्त्री पर होने वाले युग-युग के अत्याचार को बड़े सहज ढंग से प्रस्तुत किया है। साथ ही, नारी जीवन के कोमल गांधार को छीनने वाली हमारी व्यवस्था पर भी प्रश्न-चिह्न लगाया है। जयदेव तनेजा के शब्दों में, "कोमल गांधार महाभारत के पौराणिक परिदृश्य में पुरुष द्वारा नारी के शोषण की सनातन परंपरा और उसके विरुद्ध एक नारी के निजी विद्रोह की त्रासदी का मार्मिक चित्रण करता है।"6.

नाटक में दृश्य-परिवर्तन के लिए नाटककार 'ब्लैक-आउट' पद्धति का उपयोग करता है। रंगमंच पर दृश्य की समाप्ति के साथ ही अंधेरा छा जाता है और प्रकाश के साथ नया दृश्य आँखों के सामने आ जाता है। इस संबंध में जयदेव तनेजा कहते हैं कि "मंच-सज्जा और दृश्यों का उल्लेख न करके नाटककार ने केवल छायालोक के माध्यम से ही दृश्यांतर किया है और इस प्रकार कई छोटे-छोटे दृश्यांतरों द्वारा समय एवं घटनाओं के लंबे फैलाव को अपने में समेट लिया है।"7. पूरे नाटक में इस प्रकार का प्रयोग नाटककार करता जाता है। दृश्य-परिवर्तन से नए दृश्य के साथ समय का अंतराल भी स्पष्ट होता जाता है। इस नाटक में साधारणतः पचास वर्ष के समय का अंतराल विद्यमान् है। नाटक की कथा का आरंभ गांधारी के हस्तिनापुर आगमन की यात्रा से होता है और इसका समापन वृद्धावस्था में गांधारी और धृतराष्ट्र के दावानल-प्रवेश से होता है। सारा घटनाक्रम इन्हीं पचास वर्षों की कालावधि में समेटा गया है। नाटककार ने पात्रों की वेषभूषा के विषय में कोई चर्चा नहीं की है। यह पौराणिक विषय-वस्तु का

वहन करने वाली नाट्यकृति है, अतः स्वाभाविक है कि पात्रों की वेशभूषा ऐसी होनी चाहिए जिससे नाटक पौराणिक लगे। नाटक की भाषा अत्यंत चुस्त एवं स्वाभाविक है जिसका नाटक की सफलता में महत्वपूर्ण योगदान माना जा सकता है। नाटक में हमें कोई निरर्थक शब्द दिखाई नहीं देता। एक शब्द दूसरे शब्द से मिलकर एक लय पैदा होती है जो नाटककार के भावों को अभिव्यक्त कर दर्शकों पर गंभीर प्रभाव डालती है। प्राचीन कथा-बीजों तथा पात्रों के नए अन्वय को खोजने के उद्देश्य से लिखी इस कृति में नाटककार ने विश्लेषणात्मक शैली को अपनाकर इस कृति को वैचारिक धरातल पर प्रौढ़ एवं गंभीर बना दिया है। पौराणिक कथा होने पर भी कहीं भी अनावश्यक संस्कृत-प्रचुरता नहीं लाई गई है जिससे कृति की बोधगम्यता बढ़ी है। कहा जा सकता है कि इस नाटक की भाषा पात्रानुकूल, साहित्यिक किन्तु अकृत्रिम और प्रेषणीयता लिए हुए है। इससे नाटक की गरिमा बढ़ी है और नाटक मंचन की दृष्टि से सफल बन पाया है।

जिस नाटक की संवाद-योजना चुस्त और चुटीली होती है वही नाटक रसमयता प्रदान करने में सफलता प्राप्त कर सकता है। अतः सफल नाटक के लिए नाटक के संवादों का छोटे और स्वाभाविक होना आवश्यक होता है। 'कोमल गांधार' के अधिकांश संवाद संक्षिप्त, चुटीले और सारगर्भित बने हैं। कुछ स्थानों पर स्वगत कथन का भी प्रयोग किया गया है, जैसे संजय के मानसिक घात-प्रतिघात के चित्रण के लिए, किन्तु यह अखरता नहीं बल्कि नाटक की संवेदना में वृद्धि ही करता है। नाटक में काव्यमयी भाषा का भी प्रयोग किया गया है जिससे संवादों की मार्मिकता बढ़ती है। ध्वनि, संगीत आदि का प्रसंगानुकूल प्रयोग नाटक में किया जा सकता है। इसकी अनेक संभावनाएं नाटक के विभिन्न प्रसंगों मे मौजूद है, जैसे गांधारी के विवाह की तैयारियों का वर्णन, युद्ध के पश्चात् का वर्णन आदि। अर्थ की गूंज को दर्शकों तक पहुंचाने के लिए नाटककार ने स्थान-स्थान पर बिन्दु-चिह्नों का प्रयोग किया है। 'चौंककर', 'आवेग में', 'असमंजस में', 'बेचैन होकर', 'थके स्वर में' आदि संकेतों का प्रयोग है जिससे निर्देशन और अभिनय में सहायता मिलती है तथा नाटक की संप्रेषणीयता में वृद्धि होती है।

'कोमल गांधार' को रंगमंच पर प्रस्तुत करते हुए किसी प्रकार की विशेष रंग-सज्जा का आयोजन नहीं करना पड़ता। पौराणिक आधार होने के कारण मंच पर देश, काल तथा वातावरण के चित्रण की पर्याप्त संभावनाएं होने पर भी नाटककार ने इस तरफ बहुत संकेत नहीं किया है, क्योंकि उनका उद्देश्य पौराणिक कथा को दोहराना नहीं बल्कि उन्हें नए आयामों में प्रस्तुत करना है। इस कारण संवादों के बल पर ही काल-बोध कराया गया है और इन्हीं के माध्यम से अधिकाधिक परिवेश-निर्माण की कोशिश की गई है। नाटक में एक के बाद एक दृश्य बदलते रहते हैं। नाटककार स्वयं इस प्रकार की सूचना देता जाता है। पात्रों की उम्र, उनकी वेशभूषा, उनकी बदलती हुई भाव-भंगिमाओं तथा नाटक की प्रकाश-योजना का संकेत यथास्थान नाटककार स्वयं कर देता है, इसलिए निर्देशक को विशेष आयोजन और चिंतन की आवश्यकता नहीं पड़ती। जैसे, नाटक के उत्तरार्द्ध के आरंभ में – "गांधारी अब वृद्ध हो गई है। धृतराष्ट्र उसके पास ही बैठा है।"8. नाटक में पात्रों का जमघट नहीं है, केवल सात पात्र ही दर्शकों के सामने आते हैं। मंच पर एक साथ चार पात्रों से अधिक पात्र इकट्ठा नहीं होते, इसलिए दर्शकों का ध्यान इधर-उधर नहीं बँटता। रंगमंच पर उपस्थित सभी पात्रों को नाटककार ने सक्रिय दिखाया है और उन्हें अभिनय का उचित अवसर प्रदान किया है। अतः अभिनय की दृष्टि से 'कोमल गांधार' की पात्र-योजना बेहद सफल है, क्योंकि पात्रों की संख्या मर्यादित है तथा पात्रों के चरित्रांकन में पूर्ण व्यवस्था दिखाई देती है। नाटक में किसी भी अनावश्यक दृश्य का आयोजन नहीं हुआ है। न कोई गीत है, न कोई नृत्य, किन्तु निर्देशक के लिए अपने विवेकानुसार प्रसंग के अनुकूल ध्वनि और संगीत के प्रयोग की पर्याप्त संभावनाएं नाटककार ने छोड़ी हैं। इस प्रकार, संवादों की सम्प्रेषणीयता, काव्यमयी भाषा, अभिनय की पर्याप्त संभावना, ध्वनि, संगीत, प्रकाश के प्रसंगानुकूल प्रयोग और अन्य रंगमंचीय उपकरणों के संयोजन से एक संश्लिष्ट और सार्थक रंगभाषा की रचना करने में यह नाटक पूरी तरह सफल सिद्ध होता है।

लोकनाट्य परम्परा का निर्वाह करने वाला नाटक 'अरे! मायावी सरोवर' नौटंकी शैली में रचा गया है। नौटंकी नाटक प्राय: पौराणिक कथाओं पर आधारित होते हैं। इस नाटक की कथा भी प्राचीन है और राजा इल्वलु तथा रानी सुजाता जैसे पौराणिक पात्रों को हमारे सामने प्रस्तुत करती है। नाटक ने यहां पुराण और इतिहास के साथ-साथ वर्तमान का भी समन्वय किया है। पौराणिक स्पर्श के साथ-साथ ऐतिहासिकता के आधार पर निर्मित कथा में अधिकाधिक आधुनिक सन्दर्भों को डालकर नाटककार ने समकलीन दर्शकों के लिए इसे बोधगम्य बनाया है। यह नाटक अभिनय के क्षेत्र में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त कर चुका है। इस नाटक की अभिनेयता जनसाधारण को अपने करीब लाकर उनके हृदय पर अपना प्रत्यक्ष प्रभाव डालती है। यह नाटक लोक-नाट्य परंपरा के अंतर्गत नौटंकी शैली में रचित है। नाटक का सूत्रधार प्रेक्षकों को संबोधित करके उन्हें ही नाटक का अंग बना देता है, जो नाटक की मंचीय संप्रेषणीयता को बढ़ाता है प्रकाश तथा संगीत की सार्थक योजना भी ईस नाटक के

संप्रेषण को सफल बनाती है।
(प्रकाश केवल सूत्रधार पर।)
सूत्रधार - चा-पानी हो गया। सज्जनो, हो गई सिगरेट बीड़ी। इधर आप चा-पानी में लगे थे, और उधर हम मर रहे थे राजा को अपने सेक्स में वापिस लाने। दस आदमी दौड़ाए दसों दिशाओं में। एक से एक डॉ० बुलाए।9.

यह नाटक पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध, दो भागों में विभाजित है। नाटक की कथा संक्षिप्त होते हुए भी रोचक है। अंत तक दर्शकों की उत्सुकता बनी रहती है। नाटक की सम्पूर्ण कथा का कौतूहल चरमसीमा की ओर लगातार बढ़ता रहता है। कथा के विकास में कहीं कोई अवरोध नहीं है। नौटंकी शैली के सभी नाटकों में अलौकिक घटनाएं नित्य होती रहती हैं। सूत्रधार इन अलौकिक घटनाओं के समय उपस्थित रहकर कथासूत्र को जोड़ने का काम करता है। लोकनाट्य की परम्परा में सूत्रधार अत्यंत महत्वपूर्ण होता है क्योंकि नाटक के पात्र, नाटक के प्रसंग तथा नाटक के दृश्य आदि का परिचय दर्शकों से कराने का महत्वपूर्ण कार्य वही करता है। इस नाटक में भी सूत्रधार ये सारे कार्य करता है। साथ ही, आवश्यकतानुसार कई पात्रों की भूमिका निभाने का, नाटक के कथा-प्रसंगों को जोड़ने का तथा चरित्रों पर टिप्पणी करने का काम भी वह करता रहता है। इस प्रकार के नाटक संगीत तथा नृत्य-प्रधान होते हैं। नाटक में प्रयुक्त संगीत तत्व का पालन ढोलक तथा मंजीरा बजाने वाले करते रहते हैं। सम्पूर्ण नाटक में जो भी दृश्य हैं, वे सभी काल्पनिक हैं और दर्शक कल्पना के सहारे उनका रस ग्रहण करते हैं। नाटक में विचित्र वन और उसकी सारी अलौकिकता की कल्पना ही की जाती है। इसी कारण इस नाटक में रंगमंचीय साज-सज्जा की कोई आवश्यकता नहीं है और इसे कहीं भी आसानी से खेला जा सकता है। स्थान-स्थान पर नाटककार ने रंग-निर्देश भी दिए हैं जो मंचन के समय निर्देशक के लिए उपयोगी सिद्ध होते हैं।

नौटंकी शैली के कारण नाटक में गीतों का प्रयोग अनिवार्यत: हुआ है। इस नाटक की गीत-संगीत योजना भी अनुपम है। गणेश वन्दना से नाटक का आरम्भ होता है और नाटक का अंत भी गीत से ही होता है। नाटक में कुल मिलाकर चौदह गीत हैं। नाटकवृंद गीत तथा संगीत के माध्यम से नाटक की कथावस्तु को आगे बढ़ाता है, जो उसके सफल संप्रेषण में सहायक बनता है-

महिमा या विचित्र वन की।
केहरी खाए घास रे भैया
गैया खाए मांस रे भैया
किरबा से आए चंदन परिमल
जूही कुसुम से बास रे भैया
अवस्था भई अजब मन की।
महिमा या विचित्र वन की।

नाटक के वातावरण की सृष्टि, कथा-प्रसंग की अनुकूलता, करुण रस एवं वीरतापूर्ण भावों के उद्दीपन, पात्रों के मनोभावों के चित्रण, रोचकता के निर्माण तथा दर्शकों के मनोरंजन के लिए यथास्थान इन गीतों का प्रयोग किया गया है, जिससे यह नाटक एक "संगीतमय फैंटेसी" बन गया है। इसी प्रकार, नाटक में नृत्य का भी रोचक प्रयोग किया गया है। राजा (स्त्री) और ऋषि साथ-साथ मादक नृत्य करते हैं। लय, ताल और गति का भी सुन्दर प्रयोग नाटक में सर्वत्र दिखाई देता है। राजा प्रथम बार संगीत की ताल पर ही पग धरता हुआ रंगमंच पर आता है। रानी भी इसी प्रकार गीत की ताल पर रंगमंच पर प्रवेश करती है। शबरी नारायण तीर्थ करते समय भी राजा-रानी इस प्रकार चलते हैं जैसे रामलीला में राम और सीता। नाटक में उपस्थित वाद्यवृन्द की कोई निश्चित संख्या नहीं बताई गई है। पूरे नाटक के दौरान वे मंच के एक कोने में बैठे रहते हैं। इसी प्रकार, गायक वृन्द की भी कोई निश्चित संख्या नाटककार ने नहीं बताई है। प्रत्येक पात्र को अपना अभिनय करने के लिए उचित अवसर दिया गया है। अत: अभिनय की दृष्टि से नाटक के सभी पात्रों की योजना अत्यंत सफल रही है। इन सब बातों को ध्यान में रखकर ही डॉ. सुरेश गौतम और वीणा गौतम इस नाटक को "अभिनय और संगीत का अनूठा संगम" बताते हैं।10.

नाटक की भाषा सरल और सुबोध है तथा संवादों में एक अलग प्रकार का स्वाद है। नाटककार ने संवादों में प्रतीकात्मकता, बेतुकेपन और व्यंग्य का भरसक प्रयोग कर वर्तमान परिवेश की विसंगति को मूर्त रूप दिया है। नृत्यों और गीतों में हास्य तथा व्यंग्य स्थायी रूप में उपस्थित होता नज़र आता है। सारे गीत बड़े ही सुबोध विधान में लिखे गए हैं तथा लोकगीतों की विभिन्न

पद्धतियों का निर्वाह करते हैं। नृत्य भी बड़े आकर्षक हैं। नाटक की कथा को रोचक बनाने के लिए नाटक के प्रसंगों को हास्य-व्यंग्य पर चित्रित किया गया है। यहाँ अनेक प्रसंग उल्लेखनीय हैं जैसे पुरुष राजा का स्त्री में रूपांतर, कुछ पात्रों को विभिन्न जानवरों के मास्क लगाकर प्रस्तुत करने का प्रयोग- 'उल्लू' यहाँ विचित्र वन के विद्यापीठ के कुलपति के रूप में सामने आता है, 'गाय' डेयरी कॉरपोरेशन की मैनेजिंग डायरेक्टर है, 'कुत्ता' यहाँ संपादक है, आदि। इस प्रकार पूरे नाटक में हास्य-व्यंग्य की बौछार है किन्तु इनका प्रयोग सांकेतिक भी है। इन विसंगत तत्वों के माध्यम से प्रस्थापित व्यवस्था पर करारा व्यंग्य किया गया है। केवल मनोरंजन ही नहीं समाज-प्रबोधन भी यहाँ उद्देश्य है। नाटक के माध्यम से नाटककार दर्शाता है कि स्त्री का जीवन पुरुष के जीवन से अधिक सार्थक, सृजनशील और समर्पण-भरा होता है। पुरुष जल्दी समाप्त हो जाता है और स्वयं को जल्दी दोहराने लगता है। कुल-मिलाकर यह नाटक अपनी संगीतमय दृष्टि और दिलचस्प नाट्य-शैली के कारण रोचक सिद्ध हुआ है।

"कालजयी" नाटक में नाटककार ऐतिहासिक कथा के माध्यम से राजनीतिक संघर्ष की व्याख्या करता है। डॉ. सुरेश गौतम और वीणा गौतम के अनुसार, "वस्तुतः यहाँ पौराणिक आधार न होकर उसका आभास मात्र है जिसके माध्यम से उन्होंने (नाटककार ने) राजतंत्र और प्रजातन्त्र के संघर्ष को रूपायित किया है।"11. दूसरे शब्दों में, इसमें राजतंत्र की जनविरोधी व्यवस्था से लोकतंत्र की जनपक्षीय व्यवस्था तक के संघर्ष का चित्रण किया गया है। नाटक का कथानक संक्षिप्त है, साथ ही चुस्त और रोचक भी। किसी प्रकार की अरुचिकर और असंभव घटनाओं का निर्माण नहीं हुआ है। दर्शक की उत्सुकता प्रत्येक घटनाक्रम के साथ बनी रहती है। कुल-मिलाकर इस नाटक में पाँच दृश्य हैं और ये सभी दृश्य कुल दो स्थानों पर मूर्त रूप लेते हैं। पहला स्थान है राजा कालजयी के राजमहल का प्रकोष्ठ तथा दूसरा स्थान है एक गहन गुफा। अतः सम्पूर्ण नाटक के दृश्यबंध को दो भागों में बाँटकर प्रस्तुत किया जा सकता है। नाटक की सम्पूर्ण कथा पाँच भागों में विभाजित है जिससे दृश्य परिवर्तन का अत्यधिक महत्व है। राजमहल का प्रकोष्ठ बड़े आकार का है और राजसिक साज-सज्जा से परिपूर्ण है। मंच की रूपरेखा के संदर्भ में नाटककार का स्पष्ट मत है कि यह मंच की सामान्य रूपरेखा ही है। निर्देशक को मंचीय साज-सज्जा की छूट देते हुए वे कहते हैं कि "दिग्दर्शक जिस काल से नाटक के वातावरण को सम्बद्ध करना चाहे तदनुसार मंच-सज्जा की स्वरूप रचना कर सकते हैं, क्योंकि नाटक किसी काल-विशेष के ऐतिहासिक बोध से बंधा न होकर, केवल ऐतिहासिकता के परिवेश की ही अपेक्षा रखता है।"12. गुफा का आकार बड़ा है। उसमें जगह-जगह अस्त्र-शस्त्र रखे हैं और बीच में स्वतंत्रता की देवी की प्रतिमा है। बहुत सारे शिलाखण्ड भी हैं।

पात्रों की बदलती भाव-भंगिमाएँ, उनकी वेशभूषा, आयु, प्रकाश-योजना आदि के संबंध में नाटककार द्वारा दिए गए रंग-निर्देश नाटक की सफलता में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं क्योंकि इनसे निर्देशक की कठिनाई दूर हो जाती है और अभिनेताओं को भी अभिनय करते वक्त कोई कठिनाई महसूस नहीं होती। इस प्रकार के संकेत नाटककार ने इस नाटक में स्थान-स्थान पर तथा समय-समय पर दिए हैं जिससे नाटक में चुस्ती आ गई है और अभिनेताओं को क्या करना है इसकी जानकारी मिल जाती है। नाटक में ध्वनि और प्रकाश के प्रयोग की भी काफी संभावनाएं हैं। इनकी कुशल व्यवस्था पर नाटक की मंचीय सफलता काफी निर्भर करेगी। नाटक का आरंभ ही नेपथ्य में संगीत के स्वर के साथ होता है। राजा द्वारा न्यायकेतु और विजयकेतु की हत्या के वक्त उनकी चीखें, गुफा में की गई प्रतिज्ञा का सामूहिक स्वर, समवेत स्वर की गूंज, नेपथ्य में कोलाहल, त्रस्त जनता के नारों की गगनभेदी आवाज़ें, भगदड़, मारकाट, चीखों का मर्मांतक स्वर, रोंगटे खड़े कर देने वाली चीत्कारें, मृत्यु का तांडव, तोपों की गड़गड़ाहट, प्रकाश का कभी मंद पड़ जाना, कभी किसी विशेष स्थान पर केन्द्रित हो जाना, ऐसी अनेक रंग-युक्तियों के माध्यम से नाटककार ने एक प्रभावशाली रंगभाषा की रचना का प्रयास किया है और नाटक की अभिनेयता को बहुत ही संभावनायुक्त बनाया है। नाटक में पात्रों की अधिकता तो है किन्तु सभी पात्रों के लिए अभिनय के उचित अवसर उपलब्ध हैं। मंचीय सक्रियता के कारण वे दर्शकों पर अपनी अमिट छाप छोड़ सकते हैं। नाटककार को पात्रों के चरित्रांकन में सफलता मिली है। नाटक में नृत्य और गीत का कोई आयोजन नहीं है। पात्र और देश-काल के अनुसार इस नाटक के वातावरण का निर्माण हो जाने से नाटक सभी दृष्टि से अभिनेय बन गया है।

'घरौंदा' नाटक की मंचीय संप्रेषणीयता भी असंदिग्ध है।इस नाटक को कम मेहनत से ही प्रेक्षक वर्ग तक सफलतापूर्वक संप्रेषित किया जा सकता है। यह नाटक मध्य वर्ग की सबसे बड़ी समस्या 'घर' से संबंधित होने के कारण मध्यम वर्ग के जीवन को सच्चे रूप में प्रतिबिंबित करता है।

'पोस्टर' नाटक की संपूर्ण कथा पूर्वदीप्ति शैली में प्रस्तुत की गई, जिसके कारण प्रेक्षक वर्ग इसके कथानक से आदि से अंत तक जुड़ा रहता है। कथा में सांकेतिकता का प्रयोग अधिक मात्रा में विद्यमान होने के कारण मंचीय संप्रेषणीयता में किंचित बाधा उत्पन्न हो सकती है किंतु कथावस्तु सामाजिक होने के कारण प्रेक्षक वर्ग इस सांकेतिकता को आसानी से समझ कर कथावस्तु

के मुख्य उद्देश्य को आत्मसात कर सकता है।
'राक्षस' नाटक की मंचीय संप्रेषणीयता में पात्र संख्या अधिक होने के कारण किंचित बाधा उत्पन्न हो सकती है, किंतु लोक नाट्य से संबंधित होने के कारण इस नाटक में पात्रों की अधिक संख्या आवश्यक हो गई है। इस नाटक के सभी पात्र अपनी मंचीय सक्रियता के कारण प्रेक्षकों के हृदय पर अपनी अमिट छाप छोड़ते हैं। नाटक में कोरस दल द्वारा अनेक गीत गाए जाते हैं, जो इसके सफल संप्रेषण में सहायक हैं। नाटक में कहीं-कहीं मंत्र पाठ के द्वारा भी मंचीय वातावरण को निर्मित करने का प्रयास किया गया है।
(तीनों पद्मासन की मुद्रा में बैठ जाते हैं। मंत्र का पाठ करते हैं। कोरस दल भी साथ देते हैं।)-
ओम् स्वार्थाय नमः।
ओम् स्वहिताय नमः।
ओम् स्वसुखाय नमः।
ओम् मतलबे नमः।
ओम् सेल्फिशे नमः।
(मंच का स्वर धीरे-धीरे तेज और गहन होता है। प्रकाश धीरे-धीरे मंद होता है। जब प्रकाश लौटता है तो.....)13.

शंकर शेष का 'रक्तबीज' नाटक विचारों के गतिशील आंदोलन से संबद्ध है। नाटक में 'ब्लैक.आऊट' पद्धति का भी सफलतापूर्वक प्रयोग किया गया है। नाटक के परिवेश को आधुनिक सोच के पात्रों से संबंधित दिखाने के लिए अंग्रेजी के बड़े-बड़े वाक्यों का प्रयोग भी नाटक में किया है, जो उसकी संप्रेषण क्षमता में वृद्धि करता है--
बड़ा पुरुष -- बहुत धीमे चल रही हैं आप। फिनिश योर ग्लास.....(खुद पीता है)। गिलास खाली करता है। इस तरह.....(स्त्री शर्मा की ओर देखती है। शर्मा 'पियो' का इशारा करता है। वही पीती है)। अच्छा तो तुम टॉलस्टॉय भी पढ़ती हो, और पढ़ती हो 'फ्रीडम एट मिडनाइट' भी, वंडरफुल! ब्रिलियंट माइंड इन अ ब्यूटीफुल बॉडी।..... अ रेअर कॉम्बिनेशन।14
शंकर शेष के 'मूर्तिकार' नाटक में केवल आठ पात्र हैं, जो अपने कार्य व्यापार में निरंतर सक्रिय रहते हैं। साँझ की झुँझलाहट में कक्ष के अंदर से स्त्रीकंठ से गूँजता हुआ -- 'प्रभुजी मेरे अवगुण चित्त न धरो' शब्द करुण स्थिति का दर्शन कराता है। नाटक के भाव ने नाटक को अपेक्षित गति प्रदान की है। नाटक की भाषा भी पात्रानुकूल है, जो आदि से लेकर अंत तक प्रेक्षकों को बाँधे रखती है।
'बाढ़ का पानी नाटक' में इस प्रकार का वातावरण निर्मित किया गया है जो वैज्ञानिक उपकरणों की सहायता के बिना उत्पन्न नहीं किया जा सकता। बाढ़ के पानी की भयावहता दिखाने के लिए बादलों की गड़गड़ाहट, हवा के तेज झोंके, बिजली का चमकना, तूफान का अत्यधिक वेग , नाव की धीरे-धीरे बढ़ने वाली आवाज के द्वारा इस नाटक में बाढ़ की विभीषिका को चित्रित किया गया है। इसके अतिरिक्त नाटक के नेपथ्य से भी संवाद सुनाई पड़ते हैं, जो नाटकीय संप्रेषण तथा प्रभाव में बढ़ोतरी करते हैं।
'रत्नगर्भा' नाटक की मंचीय संप्रेषणीयता भी असंदिग्ध है। नाटककार स्वयं ही रंग-निर्देशक का कार्य करते हुए नाटक के आरंभ में रंग-निर्देश देता है-- पर्दा खुलते ही माया दीवार पर कश्मीर के किसी सुंदर दृश्य की तस्वीर टाँगती हुई दिखाई देती है। इसी नाटक के तीसरे अंक में प्रकृति चित्रण के माध्यम से मंचीय संप्रेषणीयता को उभारा गया है । बाहर तेजी से हवा चल रही है। रह-रह कर बादलों की गरजने की आवाजें सुनाई दे रही हैं। संगीत के मखध्यम से इस प्रकार की ध्वनियों को उभारकर प्रकृति के विपन्न वातावरण को उजागर किया गया है, जो पात्रों की आंतरिक उथल-पुथल का परिचायक है।
शंकर शेष का 'फंदी' नाटक कपने संप्रेषण के साथ-साथ रचना कौशल में भी एक भिन्न रचना है। तीन पात्रों को लेकर चलने वाला यह नाटक समाज के विभिन्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करता है। नाटक में केवल तीन ही अंक हैं। इस नाटक की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसका कार्य व्यापार बड़ी तीव्रता से संपन्न होता है, जिसके कारण नाटक में कहीं भी शिथिलता नहीं आ पाई है। संवादें का पैनापन इसकी संप्रेषण शक्ति में चार चाँद लगाता है।
वकील-- तुम कहाँ के रहने वाले हो?
फन्दी-- पहले मैं नागपुर में रैता था, अब इधरैच रहता हूँ।
वकील-- तुम फन्दी को अच्छी तरह से जानते हो?
फन्दी-- फन्दी अपना जिगरजान दोस्त है साब।
वकील-- तुम कौन सा काम करते हो?
फन्दी-- हम्माली करता हूँ साब।15

निष्कर्षतः

हम कह सकते हैं कि किसी भी नाटक के सफल मंचीय संप्रेषण के लिए जो विविध पहलू होते हैं, शंकर शेष ने उन सभी पहलुओं का अत्यंत सफलतापूर्वक निर्वहन किया है। शंकर शेष स्वयं रंगमंच से जुड़े हुए थे, अतः मंचन के जो बहुविध आयाम होते हैं, या मंचीय संप्रेषण में जो तत्त्व बाधक होते हैं, उनका निराकरण वे स्वयं ही कर देते थे। इसके अतिरिक्त नाटक के निर्देशक को इस बात की पूरी छूट देने के पक्ष में थे कि ज़ काट-छाँट वे करना चाहें, (विशेषकर साज-सज्जा के संदर्भ में) प्रेक्षक वर्ग की इच्छानुसार या नाटक की मांग के अनुसार, तो नाटक का निर्देशक किंचित मात्रा में बदलाव कर सकता है। नाटक के निर्देशक को पूरी छूट देने के कारण ही उनके नाटकों का मंचीय-संप्रेषण सफल हो पाया तथा उनके नाटकों की रंगमंचीय प्रस्तुति संभव हो पाई है।

शोध सारांश:

स्वतन्त्रता के पश्चात् हमें हिन्दी नाट्य जगत् में एक नई रंग चेतना और नवोन्मेष दिखाई देता है।अब समसामयिक रंगमंच के लिए अपने पारंपरिक रंगमंच की खोज और जिज्ञासा स्वाभाविक हो गई। यह समझा जाने लगा कि अपने पारंपरिक नाट्य तत्वों को नई कलात्मक दृष्टि से अपनाकर ही हम पश्चिमी रंग तत्वों का प्रयोग भी अधिक कलात्मक रूप से कर सकेंगे, अतः नए नाटककार अब नवीन और मौलिक रंगभाषा की तलाश में जुट गए। ऐसे नए प्रयोगधर्मी नाटककारों में शंकर शेष का स्थान विशिष्ट माना जा सकता है।1955 से लेकर 1981 तक की अपनी सर्जन-यात्रा में इन्होंने अपने विभिन्न नाटकों के माध्यम से लोकधर्मी और नाट्यधर्मी परम्पराओं का निर्वाह कर हिन्दी नाट्य जगत को गौरवान्वित किया है। यद्यपि इनके सभी नाटक मंचन, सम्प्रेषण, कथ्य, शिल्प, भाषा और अभिनेयता की दृष्टि से विशिष्ट एवं प्रयोगधर्मी सिद्ध हुए, किन्तु मिथकीय और पौराणिक पात्रों को आधार बनाकर रचे गए नाटकों की रंगभाषा यहाँ विशेष उल्लेखनीय है। इन नाटको में शंकर शेष ने ऐतिहासिक-पौराणिक संदर्भों का आश्रय लेकर आधुनिक बोध को प्रस्तुत किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. जाधव प्रकाश नारायण राव, डॉ० शंकर शेष का नाटक साहित्य, साहित्य रत्नालय, कानपुर, 01, संस्करण-1998, पृष्ठ 230

2. राजपथ से जनपथ नटशिल्पी शंकर शेष- डॉ. सुरेश गौतम, डॉ. वीणा गौतम, शारदा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1986- पृ.109

3. राजपथ से जनपथ नटशिल्पी शंकर शेष- डॉ. सुरेश गौतम, डॉ. वीणा गौतम, शारदा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1986-पृ. 111

4. 'शेष शंकर,' शंकर शेष: समग्र नाटक (मूर्तिकार), किताबघर प्रकाशन नई दिल्ली, खण्ड-3, संस्करण-2000, पृष्ठ 65

5. समकालीन हिन्दी नाटक और रंगमंच- जयदेव तनेजा, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, 1978, पृ. 42

6.नई रंग-चेतना और हिन्दी नाटककार-जयदेव तनेजा, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली-1994, पृ. 142

7. नई रंग-चेतना और हिन्दी नाटककार- जयदेव तनेजा, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली-1994, पृ. 143

8. 'कोमल गांधार', समग्र नाटक, शंकर शेष, भाग-1, सं. हेमंत कुकरेती, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृ.142

9. 'शेष शंकर,' शंकर शेष: समग्र नाटक (मूर्तिकार), किताबघर प्रकाशन नई दिल्ली, खण्ड-2, संस्करण-2000, पृष्ठ 160

10. राजपथ से जनपथ नटशिल्पी शंकर शेष- डॉ. सुरेश गौतम, डॉ. वीणा गौतम, शारदा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1986-पृ.135

11. राजपथ से जनपथ नटशिल्पी शंकर शेष- डॉ. सुरेश गौतम, डॉ. वीणा गौतम, शारदा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण,

1986-पृ.116

12. प्रथम दृश्य का रंग संकेत, 'कालजयी', समग्र नाटक, शंकर शेष, भाग-1, सं. हेमंत कुकरेती, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृ.144

13. 'शेष शंकर,' शंकर शेष: समग्र नाटक (मूर्तिकार), किताबघर प्रकाशन नई दिल्ली, खण्ड-2, संस्करण-2000, पृष्ठ 339

14. शेष शंकर,' शंकर शेष: समग्र नाटक (मूर्तिकार), किताबघर प्रकाशन नई दिल्ली, खण्ड-2, संस्करण-2000, पृष्ठ257

15.शेष शंकर,' शंकर शेष: समग्र नाटक (मूर्तिकार), किताबघर प्रकाशन नई दिल्ली, खण्ड-3, संस्करण-2000, पृष्ठ 108